मनुष्यमात्र का स्वधर्म में अधिकार है, परन्तु फल में आसक्ति के बिना ही कर्म करना चाहिए। इस प्रकार का निष्काम स्वधर्माचरण निस्सन्देह मुक्तिपथ की ओर ले जाता है।

अतएव श्रीभगवान् अर्जुन को फलासक्ति को त्याग कर कर्तव्य के रूप में युद्ध करने की आज्ञा देते हैं। उसका युद्ध से उपरत हो जाना भी आसक्ति का ही एक रूप है। आसक्ति के रहते मुक्तिपथ की प्राप्ति नहीं हो सकती। आसक्ति अनुकूल हो या प्रतिकूल, बन्धनकारी ही सिद्ध होती है। अकर्म पापमय है। अतएव कर्तव्य के रूप में युद्ध करना अर्जुन के लिए मुक्ति का एकमात्र कल्याणकारी मार्ग है।

16.2

योगस्थः कुरु कर्माणि संगं त्यक्त्वा धनंजय।
सिद्ध्यसिद्ध्योः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते।।४८।।

योगस्थः=योग में दृढ़तापूर्वक स्थित हुआ; **कुरु**=कर; **कर्माणि**=स्वधर्म; **संगम्**=आसक्ति को; **त्यक्त्वा**=त्याग कर; **धनंजय**=हे धनंजय; **सिद्ध्यसिद्ध्योः**=सफलता-विफलता में; **समः**=समान बुद्धिवाला; **भूत्वा**=होकर; **समत्वम्**=मन का समत्व भाव ही; **योगः**=योग; **उच्यते**=कहा जाता है।

अनुवाद

हे अर्जुन! योग में स्थित होकर सिद्धि-असिद्धि में समान बुद्धि रखते हुए आसक्ति को त्याग कर स्वधर्मरूप कर्म का आचरण कर। मन का ऐसा समभाव ही योग कहलाता है।।४८।।

तात्पर्य

श्रीकृष्ण अर्जुन से योग में स्थित होकर कर्म करने को कह रहे हैं। इस योग का क्या स्वरूप है? योग का अर्थ है नित्य विक्षुब्ध रहने वाली इन्द्रियों को वश में करके मन को परतत्त्व में एकाग्र करना। परतत्त्व भगवान् श्रीकृष्ण ही हैं। वे स्वयं अर्जुन को युद्ध की आज्ञा दे रहे हैं। अतः अर्जुन को युद्ध के परिणाम से कोई सरोकार नहीं होना चाहिए। जय-विजय का विचार श्रीकृष्ण किया करें, अर्जुन को तो बस श्रीकृष्ण के निर्देशानुसार कर्म करना है। श्रीकृष्ण की आज्ञा का पालन करना यथार्थ योग है। 'कृष्णभावनामृत' नामक पद्धति में इसी का अभ्यास किया जाता है। एकमात्र कृष्णभावना के माध्यम से ही इस अहंभाव का त्याग किया जा सकता है कि मैं स्वामी हूँ, भोक्ता हूँ। इसके लिए श्रीकृष्ण अथवा उनके सेवक का सेवक बनना होगा। कृष्णभावनाभावित स्वधर्माचरण का सन्मार्ग यही है। वास्तव में कृष्णभावनाभावित होकर स्वधर्म का आचरण करना ही योग में स्थित होकर कर्म करना है।

अर्जुन क्षत्रिय है, अतः वर्णाश्रम धर्म का अनुयायी है। विष्णु पुराण के अनुसार सम्पूर्ण वर्णाश्रम धर्म का प्रयोजन श्रीविष्णु को प्रसन्न करना है। सांसारिक परिपाटी के विपरीत, अपनी इन्द्रियों की तृप्ति करने के स्थान पर भगवान् श्रीकृष्ण को सन्तुष्ट करना चाहिए। श्रीकृष्ण का परितोषण किये बिना वर्णाश्रम धर्म का भलीभाँति पालन नहीं हो